Indian Streams Research Journal
Vol -1 , ISSUE –1, Feb - 2011
ISSN:- 2230-7850
Available online at www.isrj.org

मानव के व्यक्तित्व विकास में अष्टांग योग की भूमिका– एक अध्ययन

अविनाश यादव

शोध छात्र, दर्शन शास्त्र, (योग) , देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

सारांशः–

प्रस्तुत अध्ययन मानव के व्यक्तित्व विकास में अष्टांग योग की भूमिका प्राचीन ग्रन्थों के अनुषीलन द्वारा किया गया है। व्यक्तित्व और अष्टांग योग परस्पर जुड़े हुए हैं। और अष्टांग योग का व्यक्तित्व पर बहुत ही साकारात्मक प्रभाव पड़ता है। ऐसा शोधार्थी के शोध अध्ययन में पाया गया है।

व्यक्तित्व का अर्थ :–

व्यक्तित्व एक ऐसा विषय है जिस विषय के अनेक दृष्टिकोण हो सकते हैं किन्तु व्यक्तित्व को पूर्ण रूप से अभिव्यक्त करने वाली संपूर्ण परिभाषा मनोवैज्ञानिकों के द्वारा इसके अध्ययन के प्रति जागरूक रहते हुए भी वर्तमान तक निष्चित नहीं की जा सकी है। क्योंकि व्यक्तित्व शब्द के अंतर्गत अनेक विशिष्ट गुणों, व्यवहारों आदि का अनन्त प्रकार से समन्वय निहित है। इसके अन्तर्गत आध्यात्मिक, मानसिक तथा दैहिक गुणों के समन्वय का परिवर्तनशील रूप उपस्थित हो जाता है।

व्यक्तित्व अंग्रेजी शब्द **पर्सनेलिटी** का अनुवाद है और अंग्रेजी भाषा में पर्सनेलिटी (Personality) शब्द की लातीनी शब्द **'पर्सोना'** (Persona) से व्युत्पत्ति हुई है। **'पर्सोना'** शब्द का अर्थ हैं चेहरे का नकाब, अथवा कृत्रिम चेहरा। प्राचीनकाल में अभिनेता तथा अभिनेत्रियाँ नाटक करते समय रंगमंच पर कृत्रिम चेहरा पहनते थे इसका अभिप्राय, यह था कि दर्शक उन्हें पहचान न सके। व्यक्तित्व वह प्रत्यय है जिसके अंतर्गत व्यक्ति के विचारात्मक एवं संवेगिक गुणो तथा प्रेरक प्रतिक्रिया (Motor Reaction) और इन अनुक्रियाओं का अद्वितीय संगठन आता है।

व्यक्तित्व की परिभाषायें :–

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार :–''मनुष्य में जो शक्ति विद्यमान हैं, उसका एक भाषा वह अपनी देह की सुरक्षा में व्यय करता है। शक्ति के शेष भाग से वह दिन–रात दूसरों को प्रभावित कर रहा है। हमारे शरीर, गुण, प्रज्ञा, आध्यात्मिकता– ये निरन्तर दूसरों को प्रभावित कर रहे हैं। इसी प्रकार जहाँ हम दूसरों को प्रभावित कर रहे हैं, वहाँ दूसरों से प्रभावित भी हा रहे हैं। दूसरों को प्रभावित करने वाली यह शक्ति हो व्यक्तित्व है।''

वारेन :–''व्यक्तित्वव्यक्ति का संपूर्ण मानसिक संगठन है, जो उसके विकास की किसी भी अवस्था में होता है।''

बोरिंग भी व्यक्तित्व की परिभाषा करते हुए हमें बताता है, ''व्यक्तित्व, व्यक्ति का अपने पर्यावरण से प्रतिरूपक अथवा लाक्षणिक सामंजस्य है।''

आर.एस. वुडवर्थ ने व्यक्तित्व की परिभाषा करते हुए कहा है कि ''व्यक्तित्व मनुष्य के संगत व्यवहार के गुणों का संपूर्ण योग हैं।''

''भारतीय मनोविज्ञान में व्यक्तित्व की धारणा'' :–

पाश्चात्य मनोविज्ञान के समान भारतीय मनोविज्ञान कभी भी जीवन से तटस्थ नहीं रहा है। भारतीय मनोविज्ञान वास्तविक जीवन की समस्याओं से आरंभ होता है। प्राचीन ऋषियों ने यथार्थ जीवन में उपस्थित होने वाली मनोवैज्ञानिक

समस्याओं का विश्लेषण करते हुए ही भारतीय मनोविज्ञान के सत्यों की खोज की है। उनका उद्देश्य समाज में अधिक व्यवस्थित और संतुलित जीवन व्यतीत करने के उपायों की खोज करना था। वे एक ऐसा जीवन दर्शन निर्माण करना चाहते थे जिसके आधार पर व्यक्ति अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए संसार में शांतिपूर्वक जीवन बिता सके। इस उद्देश्य को लेकर उन्होंने व्यक्तित्व के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण अनुसंधान किए हैं।

व्यक्तित्व की धारणा : –

भारतीय आयुर्वेद शास्त्र में एक आदर्श व्यक्तित्व के निम्नलिखित लक्षण बताए गए हैं:–

''समदोषः समाग्निश्य समधातुमल क्रियः
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनः''
इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार से किया जा सकता है।

1. **समदोष** – शरीर में वात (स्नायु संस्थान), वित्त (रक्त संस्थान) तथा कफ (मल संस्थान) की साम्यावस्था।
2. **समाग्नि** – पाचक अग्नि की समानता।
3. **समधातु** – शरीर में रस, रक्त, आदि धातुएँ न कम हो, न अधिक।
4. **सममल** – मल, सूत्र, पसीन आदि न कम आना न अधिक।
5. **समक्रिया** – शारीरिक तथा मानसिक क्रियाओं में समता।
6. **प्रसन्नात्मेन्द्रियमना** – आत्मा, इन्द्रियाँ तथा मन की प्रसन्नता–जिस व्यक्ति में उपरोक्त लक्षण होंगे, उसे ही पूर्ण व्यक्तित्व वाला समझा जा सकता हैं।

व्यक्ति के प्रकार :–

हिपोक्रिट्स ने कहा कि जिस तरह संसार का पृथ्वी, वायु, अग्नि, जल तत्वों से निर्माण हुआ हैं, उसी तरह मनुष्यों के स्वभाव में भी निम्नलिखित चार प्रकार के तत्व पाए जाते हैं जिनमें कोई न कोई तत्व प्रबल रहता हैं। इस सिद्धांत को पित्त अथवा शरीर–रस संबंधी सिद्धांत कहते हैं।

1. **वायु तत्व (Sanguine)** में वायु और रक्त अधिकतम होता हैं। इसलिए यह मनुष्य स्वभावतः सुरा, सुन्दरी, नृत्य–गीत, राग–रंग प्रिय होता है।
2. **जल तत्व (Phlegmatic)** इसमें जल अथवा बलगम अधिकतम पाया जाता है। इसलिए यह मनुष्य आलसी स्वभाव का होता है और हर काम को सुस्ती से करता है।
3. **पृथ्वी तत्व (Melancholy)** इसमें पृथ्वी अथवा काला पित्त अधिकतम पाया जाता है। यह मनुष्य सदैव उदासीन, मौन, शान्त एवं चिन्तनयुक्त स्वभाव का होता ह।
4. **अग्नि तत्व (Choleric)** इसमें अग्नि अथवा पीला पित्त अधिकतम पाया जाता है। यह मनुश्य तीव्र अथवा उग्र वृत्ति का होता है; तनिक बात से ही लाल–पीला हो जाता हैं।
5. हिपोक्रिट्स ने मनुष्यों के उपरोक्त वर्गीकरण पित्तों के आधार पर किया था और आज भी विज्ञान हमें यह बताता है कि रासायनिक तत्व एवं हॉरमोन (उत्तेजक रस) बहुत सीमा तक हमारे व्यक्तित्व पर प्रभाव डालते हैं। इस वर्गीकरण के बाद कई और प्रकार के वर्गीकरण हुए हैं।

देह प्ररूप (Body-Type) सिद्धान्त :–

देह–प्ररूप (Body-Type) सिद्धांत अर्नेस्ट क्रिचमर ने अपनी पुस्तक Physic and Character में दैहिक बनावट और मानसिक लक्षणों में संबंध स्थापित कर मनुष्यों को चार वर्गों में विभक्त किया है अर्थात् जिस प्रकार की शारीरिक बनावट होती है। उसके अनुरूप ही मानसिक लक्षण (Behavioural Qualities) भी हैं।

1. **Asthenic -** दुबले–पतले, लम्बे–तगड़े, कमजोर मनुष्य जिनके शरीर पर हड्डी और चमड़ी ही चमड़ी हों परन्तु मांस न हो।
2. **Athletic –** सुसंगठित, लम्बे–सुडौल शरीर वाले।

3. **Pyknic –** छोटे कद एवं भारी शरीर वाले मनुष्य।
4. **Dysplastic –** क्रिचमर ने बताया कि जो इन तीनों वर्गों में न आता हो, वह इस वर्ग में आता है।

''क्रिचमर के इस सिद्धांत का पूर्णतया खण्डन वर्तमान तक नहीं हो सकता है। मनोरोग चिकित्सक क्रिचमर के सिद्धान्त की किसी सीमा तक पुष्टि भी करते हैं। यद्यपि इसमें अपवाद भी हैं। क्रिचमर ने यह प्रयत्न किया था कि वह देह अथवा व्यक्तित्व में एक संभाव्य संबंध को स्थापित कर सके।'' **W.H. Sheldon** ने भी क्रिचमर की भाँति देह–प्रकार सिद्धान्त को प्रतिपादित किया है। **शैल्डन** ने भी तीन प्रकार की देह मानी हैं।

1. **Endo-Marphy (स्थूल काया)** – मोटा, स्थूल गोल–मटोल, शरीरवाला व्यक्ति : शेल्डन ने ऐसे शरीर वाले व्यक्ति के व्यक्तित्व को Viceratonia नाम दिया है। ऐसे व्यक्ति खाने के शौकीन व अधिक खाते हैं, सदैव आशंकित, असुरक्षित, महसूस करते हैं और चिन्तित भी रहते हैं ये अधिकतर, आलसी एवं सोने वाले होते हैं परन्तु ये प्रायः सामाजिक रीति–रिवाजों का पालन करते हैं।
2. **Mesomarphy (गठित शरीर वाले)**– ये पेशी–प्रधान शरीरयुक्त व्यक्ति होते हैं; इनमें प्रतिस्पर्धा की भावना प्रचण्ड रहती है। इनका व्यक्तित्व Somatotonia कहलाता है। ये जोखिम–प्रिय होते हैं; साहसी होते हैं, अपने वस्त्रों पर अधिक ध्यान नहीं देते, परिश्रमी होते हैं, पीड़ा और दुःख को इच्छापूर्वक सहन करते हैं।
3. **Ectomarphy (कृश–काय)**– ये दुबले–पतले लम्बे शरीर वाले होते हैं। इनका व्यक्तित्व Cerebrotonia कहलाता है। ये असामाजिक, अमैत्रिक, मार्मिक संवेदनशीलन और सशंकित रहते हैं।

अष्टांग योग :–

महर्षि पतंजलि प्रणीत अष्टांग योग के आठ अंगों में से पहले चार अर्थात् **यम, नियम, आसन** और **प्राणायाम** यह बहिरंग योग में आते हैं इनका अभ्यास तन–मन का स्वास्थ्य बढ़ाने के लिए किया जाता है। अष्टांग योग के अगले चार अंग **प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि** ये अंतरंग योग में आते हैं, इनका अभ्यास मूलतः आध्यात्मिक उन्नति के लिए किया जाता है और ये व्यक्ति के व्यक्तित्व के मूल आधार हैं। यदि इनमें किसी प्रकार का तालमेल विकृत हो जाये तो व्यक्ति के व्यक्तित्व पर गहरा प्रभाव डालता है।

1. यम :– अष्टांग योग का प्रथम अंग हैं यम। **यम शब्द 'यमु उपरमे'** धातु से निष्पन्न होता है, जिसका अर्थ है– जिनके अनुष्ठान से इन्द्रियों एवं मन को हिंसादि अशुभ भावों सेहटाकर आत्मकेन्द्रित किया जाए, वे यम हैं।

I. अहिंसा II. सत्य III. अस्तेय IV.ब्रह्मचर्य V. अपरिग्रह

2. नियम :–

I. शौच II. सन्तोष III. तप IV. स्वाध्याय V. ईश्वर–प्रणिधान

3. आसन :– महर्षि पतंजलि के अनुसार,

स्थिरसुखमासनम्।

स्थिरता से सुखपूर्वक बैठने की स्थिति को आसन कहा जाता है। शरीर, मन और चैतन्य की स्थिर एवं सुखद् संयुक्तावस्था या समूचे व्यक्तित्व की स्थिर एवं सुखद् समग्रावस्था। शरीर, मन और चैतन्य जब एक संग और स्थिर हो जाते हैं और उससे जब सुख की अनुभूति प्राप्त होती हैं, तब वह स्थिति आसन कहलाती है।

4. प्राणायामः– पतंजलि के अनुसार,

तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः।

आसन के सिद्ध हो जाने पर श्वास–प्रश्वास की गति को यथाशक्ति नियंत्रित करना, प्राणायाम कहलाता है। योगदर्शन के अनुसार प्राणायाम के चार प्रकार हैं–

1. बाह्यवृत्ति
2. आभ्यन्तरवृत्ति
3. स्तम्भवृत्ति
4. बाह्याभ्यन्तर विषयाक्षेपी।

बाह्याभ्यन्तरस्तम्भवृत्तिर्देशकाल संख्यामिः परिदृष्टों दीर्घसूक्ष्मः।
बाह्याभ्यसन्तरविषयाक्षेपी चतुर्थः।

5. प्रत्याहारः– पतंजलि के अनुसार,

स्वविषयासंप्रयोगे चित्तस्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः।

अर्थात् प्राणायाम का पर्याप्त अभ्यास होने पर जब सभी इन्द्रियाँ अपने–अपने विषय से विमुख होकर अन्दर की ओर लौट जाती हैं और अर्न्तमुख होकर चित्त के अधीन हो जाती है। चित्त व वृत्तियों के शान्त हो जाने से चित्त मूल स्वरूप का अनुकरण करता है। तब उस स्थित को प्रत्याहार कहा जाता है।

6. धारणा :– पतंजलि के अनुसार,
देशबन्धश्चित्तस्य धारणा।

अर्थात् प्रत्याहार का अभ्यास होने के बाद धारणा की स्थिति बनती है। इसमें चित्त एक स्थान पर स्थित होने का अभ्यस्त होने लगता है और साधक को अन्दर मोहक प्रकाश का संगीत के रूप में आभास होता है। जिससे ध्यान लगाने में सरलता रहती है।

7. ध्यान :– पातंजलि के अनुसार,
तत्र प्रत्ययेकतानता ध्यानम्।

अर्थात् धारणा में देश विशेष स्थिरता प्राप्त चित्त अपने विषय के साथ पूर्ण एक तानता की स्थिति को प्राप्त हो जाए। उसे ध्यान कहते हैं।

8. समाधि :– पातंजलि के अनुसार
तदीवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूप शून्यभिव समाधिः।

ध्यान में लीन हो जाने पर जब उसके पीछे रहने वाले तत्व दिखाई देने मात्र अपना वही स्वरूप दिखता रहे अन्य सभी कुछ यहाँ तक कि साधक स्वयं को भी भूल जाये समाधि है। मुनि घेरण्ड के अनुसार शरीर को भूलकर मन को आत्मा से लगा देना समाधि है।

व्यक्तित्व विकास में अष्टांग योग की भूमिका :–

योग शास्त्र के प्रवर्तक महर्षि पातंजलि ने योग सूत्र का प्रणयन कर जो एक स्वतंत्र दर्शन का विधान किया है, वह अपने आप में अद्वितीय अवदान हैं। षड्दर्शनों में योग दर्शन प्रमुख हैं और इसका आधार पातंजल योग– दर्शन हैं। यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि, ये आठ अंग हैं। ये अंग आपस में इतने मिले–जुले हैं कि इनमें से एक–एक को स्वतंत्र रूप से अलग करना असंभव हैं। योगाभ्यास के इच्छुकों को यह तथ्य भलीभांति जान लेना चाहिए कि योग–साधक को मिलने वाले लाभ इन सभी अंगों के संचित प्रभाव का परिणाम हैं।

1.शारीरिक विकास में योगदान :–

योग का अर्थ है, अपनी चेतना (अस्तित्व) का बोध। अपने अन्दर निहित शक्तियों को विकसित करके परम चैतन्य आत्मा का साक्षात्कार एवं पूर्ण आनन्द की प्राप्ति करना। इन क्रियाओं से हमारी सुप्त चेतना शक्ति का विकास होता है। सुप्त तन्तुओं का पुनर्जागरण होता है एवं नए तन्तु में कोशिकाओं का निर्माण होता है। योग की सूक्ष्म क्रियाओं द्वारा हमारे सूक्ष्म स्नायुतंत्र को चुस्त किया जाता है जिससे उसमें ठीक प्रकार से रक्त परिभ्रमण होता हैं और नयी शक्ति का विकास होने लगता है। आसन एवं प्राणायामों के द्वारा शरीर की ग्रन्थियों व मांसपेशियों में कर्षण–विकर्षण आकुंचन–प्रसारण तथा शिथिलीकरण की क्रियाओं द्वारा उनका आरोग्य बढ़ता है। रक्त को वहन करने वाली धमनियाँ एवं शिराएँ भी स्वस्थ हो जाती है। अतः आसन्–प्राणायम एवं अन्य यौगिक क्रियाओं से पेन्क्रियाज एक्टिव होकर इन्स्सुलिन ठीक मात्रा में बनने लगता है, जिससे डायबिटीज आदि रोग दूर होते हैं। पाचनतंत्र के स्वास्थ्य पर पूरे शरीर का स्वास्थ्य निर्भर करता है। सभी बीमारियों

का मूल कारण पाचन तन्त्र की अस्वस्थता है। यहाँ तक कि हृदय रोग (हार्ट डिजीज) जैसी भयंकर बीमारी का कारण भी पाचन तंत्र का अस्वस्थ होना पाया गया है योगाभ्यास से पाचन तंत्र पूर्ण रूप से स्वस्थ हो जाता है, जिससे संपूर्ण शरीर स्वस्थ, हल्का एवं स्फूर्तिदायक बन जाता है।

नाड़ी तंत्र, मांसपेशियाँ, हड्डियाँ, स्नायुमंडल, ग्रंथि प्रणाली, श्वसन प्रणाली, उत्सर्जन प्रणाली, रक्त संचालन प्रणाली सभी एक–दूसरे से संबंधित हैं। वे एक–दूसरे के सहयोगी हैं, एक–दूसरे का विरोध नहीं कर सकती है। आसन शरीर को लोचदार तथा परिवर्तित वातावरण के अनुकूल ढालने के योग्य बनाते हैं पाचन क्रिया तीव्र हो जाती है। उचित मात्रा में पाचक रस तैयार होता हैं। अनुकंपी (Sympathetic) तथा परानुकपी (Parasympathetic) तंत्रिका प्रणालियों में संतुलन आ जाता है। फलस्वरूप इनके द्वारा नियंत्रित आंतरिक अंगों के कार्य में संतुलन आता है।

हठप्रदीपिका के अनुसार,
कुर्यात् तदासनम् स्थैर्यम् आरोग्यम् च अंगलाघवम्।

इसका मतलब है कि आसन करने से स्थिरता, आरोग्य या स्वास्थ्य तथा लचीलापन या चापल्य प्राप्त होता है।

आसनेन् रजोहन्ति। (सिद्ध सिद्धांत पद्धति) :–

आसन करने से किसी प्रकार का असमतलता, अस्थिरता, कंपन नहीं रहता है। क्योंकि नाड़ी तंत्र के तथा पेशियों के कार्यों में सामंजस्य व बल वृध्द्धि से कोई अंगमेजयत्व नहीं रहता। पेशीतान उचिवत स्तर पर बना रहता है। स्थिरता आती है।

आसनों के साथ ही शारीरिक स्वास्थ्य में प्राणायाम का बहुत योगदान हैं। प्राणायाम की श्वसन–क्रिया फेफड़ों को शक्तिशाली बनाकर उनके लचीलेपन को बढ़ाती है, जिसके कारण सम्पूर्ण शरीर में प्राण–वायु (ऑक्सीजन) का अधिकाधिक संचरण होता है और उससे वृद्धिगत ऊष्मा के कारण अंग–प्रत्यंक पुष्ट तथा निरोग होते हैं। प्राणायाम–क्रिया से जितनी शुद्ध प्राणवायु (ऑक्सीजन) शरीर के भीतर पहुँचती हैं, उतनी ही दूषित–वायु (कॉर्बन–डाईऑक्साईड) बाहर भी निकल जाती हैं, जिसके कारण शरीर के भीतर दूषित–मल संचित नहीं रह पाते हैं, और वह स्वच्छ तथा निर्मल बना रहता है।

शारीरिक–श्रम के कारण जिन कोशिकाओं के टूट–फूट होने से जो रासायनिक परिवर्तन होते हैं, प्राणायाम द्वारा अन्दर प्रविष्ट हुई प्राणवायु, उन सबकी क्षतिपूर्ति कर देती है। पाणायाम द्वारा श्वसन–यन्त्रों के अतिरिक्त मस्तिष्क के भीतरी स्नायुमण्डल, पीयुष–ग्रन्थि, पीनियल–ग्रंथि, आँख, कान, नाक तथा कण्ठ आदि अवयव भी स्वच्छ तथा निर्मल बने रहते हैं, फलतः स्मरण–शक्ति तीव्र होती है, मस्तिष्क सम्बन्धी विकार दूर होते हैं तथा अन्य सभी अंगों की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है।

प्राणायाम से रक्त–परिभ्रमण की गति में तेजी आती हैं, फलतः मस्तिष्क की सूक्ष्म–नाड़ियों तक वह आसानी से पहुँच जाता है। इस कारण मस्तिष्क कुछ देर के लिए निश्चेष्ट होकर विश्राम का लाभ भी पा लेता है तथा पुनः तरोताजा होकर अधिक क्रियाशोल बन जाता है। यह तन्त्रिका–तन्त्र पर नियन्त्रण स्थापित कर स्नायुओं को सबल बनाता है। फलतः प्राणायाम के अभ्यासी का मुखमण्डल तेजस्वी तथा प्रसन्न दिखाई देता है और उसका सम्पूर्ण व्यक्तित्व आकर्षक बन जाता है।

2. मानसिक विकास में योगदान :–

मानसिक विकास में अष्टांग योग के प्रथम चार अंगों यम, नियम, आसन एवं प्राणायाम का महत्वपूर्ण योगदान है। यम और नियम अष्टांग योग के आधार हैं। यम शब्द 'यमु उपरमे' धातु से निष्पन्न होता है, जिसका अर्थ है– **यम्यन्ते उपरम्यन्ते निवर्त्यन्ते हिंसादिभ्य इन्द्रियाणि यैस्ते यमाः** अर्थात् जिनके अनुष्ठान से इन्द्रियों एवं मन को हिंसादि अशुभ भावों से हटाकर आत्मकेन्द्रित किया गए, वे यम हैं। दूसरा अंग नियम में शौच, सन्तोष तप, स्वाध्याय एवपं ईश्वर प्रणिधान के द्वारा शरीर आंतरिक एवपं बाह्य की सफाई तथा मन की शुद्धि करते हुए समूचे व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना। यम एवं नियम का मुख्य उद्देश्य शरीर एवं मन की शुद्धि कर मानसिक स्वास्थ्य प्राप्त करना है। यदि हम पातंजलि द्वारा किए गए यम–नियम का अध्ययन करे तो उससे स्पष्ट होता हैं कि इनके अभ्यास से अवश्य ही समृद्ध व्यक्तित्व की रचना अवश्य ही निर्धारित होती हैं, जैसा कि निम्नलिखित अष्टांग के सातों सोपानों से प्रतीत होता है।

आसन मन को शक्तिशाली बनाते हैं और दुख–दर्द सहन करने की शक्ति प्रदान करते हैं। दृढ़ता और एकाग्रता की शक्ति विकसित करते है। आसनों के नियमित अभ्यास से मस्तिष्क शक्तिशाली एवपं संतुलित बना रहता है। बिना विचलित हुए आप शान्त मन से संसार के दुख, चिन्ताओं एवं समस्याओं का सामना कर सकते हैं। आसनों का अभ्यास व्यक्ति की सुप्त शक्तियों को जागृत करता है। उसमें आत्म विश्वास आता हैं, आसनों की अंतिम अवस्था में पहुँचने के बाद कोई हलचल नहीं होती हैं, इस स्थिति में मन स्थिर रखना, विचारों की संख्या कम से कम होना या विचार बिलकुल नहीं होना इस दृष्टि से

आसन का यह भाग मानसिक स्वास्थ्य के लिये बहुत महत्वपूर्ण हैं। शीर्षासन में पूरा शरीर उलटा होने से मस्तिष्क को ज्यादा से ज्यादा मात्रा में रक्त मिलता है। मस्तिष्क में चार महत्वपूण ज्ञानेन्द्रिय हैं। उनको इससे बहजुत लाभ होता है। तथा मस्तिष्क के सभी अंग सुचारू रूप से कार्य करने लगते हैं। प्राणायाम से रक्त–परिभ्रमण की गति में तेजी आती हैं, फलतः मस्तिष्क की सूक्ष्य नाड़ियों तक वह आसानी से पहुँच जाता हैं। जिससे मस्तिष्क तरोताजा हो जाता है। पाणायाम के द्वारा मस्तिष्क के भीतरी स्नायु मंडल, पीयूष ग्रंथि, पीनियल ग्रंथि आदि अवयव स्वच्छ और निर्मल बने रहते हैं, इससे व्यक्ति की स्मरण–शक्ति तीव्र होती हैं, मस्तिष्क संबंधी विकार दूर होते हैं। प्राणायाम के अभ्यास से मन शांत, स्थिर तथा शिथिल होता हैं। इससे मन में उथल–पुथल, खलबली, चिंता, बेचैनी वह खत्म हो जाती हैं। भ्रामरी प्राणायाम के अभ्यास से मन के तनाव दूर होते हैं, मन एकाग्र हो जाता है। मन के विश्राम शांति और स्थिरता के लिए यह प्राणायाम उत्कृष्ट है।

इस प्रकार उद्वेग, चिंता, क्रोध, निराशा, भय, कामुकता इत्यादि मनोविकारों का समाधान आसन एवं प्राणायाम द्वारा सरलतापूर्वक किया जा सकता है। इतना ही नहीं, मस्तिष्क की क्षमता के साथ स्मरण–शक्ति, कुशाग्रता, सूझ–बूझ, दूरदर्शिता, सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति इत्यादि मानसिक विशेषताओं का अभिवर्धन करके 'प्राणायाम द्वारा दीघजीजी बनकर जीवन का वास्तविक आनन्द प्राप्त किया जा सकता हैं।

3.आध्यात्मिक विकास में योगदान :–

यह सच है कि सांख्य नास्तिक दर्शन की वकालत करता है, परंतु बाद के कुछ सांख्य, ईश्वर का उल्लेख भी करते हैं। अर्थात् ''पुरूष विशेष ईश्वर'' साधक अष्टांग योग के सोपानों की सीढ़ी चढ़ता हुआ समाधि में प्रवेश कर कैवल्य की स्थिति पर पहुँच जाता है। शायद यही आध्यात्मिक विकास कहा जा सकता है। पातंजल मुनि ने अपने योग दर्शन के **कैवल्य पाद** में पंच सिद्धियों का वर्णन किया है, जिसको प्राप्त करने से आध्यात्मिक विकास के साथ–साथ व्यक्तित्व में भी निखार आता है।

संदर्भ सूची :–

1. पातंजलि योग सूत्र
2. स्वास्थ्य के लिये योग : सदाषिव निंबालकर
3. योग साधना व योग चिकित्सा रहस्यः स्वामी रामदेव
4. आसन,प्राणायाम, मुद्रा, बंध : स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
5. वषिष्ट संहिता
6. योग दर्षन : पं.श्री राम शर्मा आचार्य
7. योग दर्षन : व्यास भाष्य
8. योग दर्षन : न्यास भाष्य
9. मनु स्मृति–
10. योगासनः स्वामी कुवलयानन्द जी
11. प्राणायामः स्वामी कुवलयानन्द जी
12. शरीर विज्ञान और योगाभ्यासः डॉ.मकरंद मधुकर गोर
13. योग परिचय डॉ.पीताम्बर झा
14. आधुनिक असामान्य मनोविज्ञानः अरूण कुमार सिंह
15. मनोविकृति एवं उपचार : जी.डी.रस्तोगी
16. मनोविज्ञानः डॉ. बेन्जामिन खान
17. भारतीय मनोविज्ञानः डॉ.रामनाथ शर्मा
18. राजयोग : स्वामी विवेकानन्द
19. अष्टांग योग : ओम प्रकाष तिवारी
20. प्राणायाम रहस्य : स्वामी रामदेव
21. रोग और योग : स्वामी सत्यानन्द सरस्वती